BKAP671
[1-7]

SHORT COMMUNICATION Bhartiya Krishi Anusandhan Patrika

नेचुरोपैथी: रोगणुओं से लड़ने की शरीर की स्वाभाविक शक्ति

राम निवास[1], चारू शर्मा[2], सुनील कुमार शर्मा[3]

सारांश

प्राचीन काल से ही फेज थेरेपी या नेचुरोपैथी हर तरह की बीमारियों में कारगर साबित हो रही है। हमें प्राकृतिक तरीकों का अधिक से अधिक उपयोग करना चाहिए ताकि दुनिया में चिकित्सा उपचार की लागत कम हो सके और गरीबों तक इलाज आसानी से पहुंच सके। प्राकृतिक चिकित्सा का दर्शन और पद्धतियाँ साक्ष्य–आधारित चिकित्सा के बजाय जीववाद और लोक चिकित्सा पर आधारित हैं। प्राकृतिक चिकित्सा के अंतर्गत रोगों के उपचार एवं पुनर्प्राप्ति का आधार है– शरीर की रोगाणुओं से लड़ने की प्राकृतिक शक्ति। प्राकृतिक चिकित्सा के अंतर्गत समाज में जल चिकित्सा, होम्योपैथी, सूर्य चिकित्सा, एक्यूपंक्चर, एक्यूप्रेशर, मृदा चिकित्सा आदि अनेक पद्धतियाँ प्रचलित हैं। प्रस्तावित पेपर में नेचुरोपैथी के विभिन्न आयामों का समावेश करते हुए आने वाले समय में जहा एक ओर एंटीबायोटिक दवाओ के प्रति शरीर की प्रतिरोधक क्षमता घटती जा रही है वही दूसरी ओर सूक्ष्म जीवों की जैविक प्रकर्ति पर इन दवाओं का असर कम हो रहा है। आज सबसे अधिक चौनोतिपूर्ण कार्य है कि आम आदमी तक सस्ता एवं प्रभावी इलाज पहुचना वही दूसरी ओर पशुधन को बीमारियों से मुक्त करके पशु उत्पादों को दैनिक भोजन में अधिक से अधिक शामिल करना।

शब्द कुंजी: पशुधन, एंटीबायोटिक्स, रोग, प्रतिरोधक क्षमता, नेचुरोपैथी, चरण चिकित्सा।

Naturopathy: The Body's Natural Power to Fight Pathogens

Ram Niwas[1], Charu Sharma[2], Sunil Kumar Sharma[3]

10.18805/BKAP671

ABSTRACT

Since ancient times, phase therapy or naturopathy is proving effective in all kinds of diseases. We should make maximum use of natural methods so that the cost of medical treatment in the world can be reduced and treatment can be easily accessible to the poor. The philosophy and methods of naturopathy are based on animism and folk medicine rather than evidence-based medicine. Under naturopathy, there are many methods in the society such as water therapy, homeopathy, sun therapy, acupuncture, acupressure, soil therapy etc. Including different dimensions of phage therapy in the proposed paper, where on one hand the body's resistance to antibiotics is decreasing, on the other hand, the effect of these drugs on the biological nature of micro-organisms is decreasing. Under naturopathy, the basis of treatment and recovery of diseases is - the body's natural power to fight germs. Today the most challenging task is to make cheap and effective treatment accessible to the common man and on the other hand, by freeing livestock from diseases, to include animal products more and more in the daily diet.

Key words: Animals, Antibiotic, Diseases, Immunity, Naturopathy, Phase therapy.

फेज थेरेपी की शुरुआत प्राचीन काल में प्राकृतिक चिकित्सा (नेचुरोपैथी) से हुई थी। आधुनिक युग में विज्ञान प्राकृतिक चिकित्सा को चरण चिकित्सा के रूप में प्रयोग कर रहा है। भारत के वेदों और शास्त्रों ने प्राचीन काल से ही संपूर्ण विश्व को सभी प्रकार के रोगों का उपचार उपलब्ध कराया है और आज का आधुनिक विज्ञान भी इस उपचार के महत्व को मानने लगा है। फेज थेरेपी पर्यावरण के अनुकूल होने के साथ–साथ शरीर की बैक्टीरिया से लड़ने की क्षमता को बढ़ाती है। आज जिस तरह से इंसानों और जानवरों में बीमारियों की रोकथाम के लिए एंटीबायोटिक दवाओं का अंधाधुंध इस्तेमाल किया जा रहा है, उसके परिणामस्वरूप शरीर की बीमारियों से लड़ने की क्षमता कम होती जा रही है, जो आने वाले समय में पूरी दुनिया के

[1]Department of Animal Husbandry, Krishi Vigyan Kendra, Swami Keshwanand Rajasthan Agricultural University, Pokaran-345 021, Jaisalmer, Rajasthan, India.
[2]Department of Home Science Extension Education, Krishi Vigyan Kendra, Swami Keshwanand Rajasthan Agricultural University, Pokaran-345 021, Jaisalmer, Rajasthan, India.
[3]Department of Extension Education, Krishi Vigyan Kendra, Swami Keshwanand Rajasthan Agricultural University, Pokaran-345 021, Jaisalmer, Rajasthan, India.

Corresponding Author: Ram Niwas, Krishi Vigyan Kendra, Swami Keshwanand Rajasthan Agricultural University, Pokaran-345 021, Jaisalmer, Rajasthan, India. Email: ramniwasbhu@gmail.com

How to cite this article: Niwas, R., Sharma, C. and Sharma, S.K. (2024). Naturopathy: The Body's Natural Power to Fight Pathogens. Bhartiya Krishi Anusandhan Patrika. doi: 10.18805/BKAP671.

Submitted: 06-08-2023 **Accepted:** 01-03-2024 **Online:** 14-03-2024

सामने एक चुनौती है। इस लोकप्रिय लेख के माध्यम से प्राकृतिक या चरण चिकित्सा के अंतर्गत मिट्टी स्नान, वायु स्नान, जल चिकित्सा, स्नान की वैज्ञानिक विधि, भाप स्नान, सूर्य प्रकाश चिकित्सा उपवास पर प्रकाश डाला गया है। वर्तमान समय में हमें बीमारियों से निपटने के लिए प्राकृतिक या चरणबद्ध चिकित्सा को अपनाना होगा ताकि हम दुनिया को एक सुनहरा भविष्य दे सकें। प्राकृतिक चिकित्सा (नेचुरोपैथी) एक वैकल्पिक चिकित्सा–पद्धति एवं दर्शन है जिसमें 'प्राकृतिक', 'स्व–चिकित्सा', 'अनाक्रामक' आदि कहे जाने वाले तरीकों का उपयोग होता है। प्राकृतिक चिकित्सा का दर्शन और विधियाँ प्राणतत्त्ववाद और लोक चिकित्सा पर आधारित हैं न कि प्रमाण–आधारित चिकित्सा। प्राकृतिक चिकित्सा के अन्तर्गत रोगों का उपचार व स्वास्थ्य–लाभ का आधार है – 'रोगाणुओं से लड़ने की शरीर की स्वाभाविक शक्ति'। प्राकृतिक चिकित्सा के अन्तर्गत समाज में अनेक पद्धतियां हैं जैसे –जल चिकित्सा, होमियोपैथी, सूर्य चिकित्सा, एक्यूपंक्चर, एक्यूप्रेशर, मृदा चिकित्सा आदि। प्राकृतिक चिकित्सा के प्रचलन में विश्व की कई चिकित्सा पद्धतियों का योगदान है। प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली चिकित्सा की एक रचनात्मक विधि है, जिसका लक्ष्य प्रकृति में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध तत्त्वों के उचित इस्तेमाल द्वारा रोग का मूल कारण समाप्त करना है। यह न केवल एक चिकित्सा पद्धति है बल्कि मानव शरीर में उपस्थित आंतरिक महत्त्वपूर्ण शक्तियों या प्राकृतिक तत्त्वों के अनुरूप एक जीवन–शैली है। यह जीवन कला तथा विज्ञान में एक सम्पूर्ण क्रांति है। इस प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति में प्राकृतिक भोजन, विशेषकर ताजे फल तथा कच्ची व हलकी पकी सब्जियाँ विभिन्न बीमारियों के इलाज में निर्णायक भूमिका निभाती हैं। प्राकृतिक चिकित्सा निर्धन व्यक्तियों एवं गरीब देशों के लिये विशेष रूप से वरदान है।

फेज थेरेपी/नेचुरोपैथी का इतिहास

फेज थेरेपी की खोज की रिपोर्ट 1915 में ब्रिटिश बैक्टीरियोलॉजिस्ट फ्रेडरिक टॉर्ट द्वारा और 1917 में फ्रांसीसी माइक्रोबायोलॉजिस्ट फेलिक्स डीश्हेरेले द्वारा दी गई थी। डीश्हेरेल ने कहा कि फेज हमेशा शिगेला पेचिश के रोगियों के मल में उनके ठीक होने से कुछ समय पहले ही दिखाई देते थे। उन्होंने ''जल्दी ही जान लिया कि बैक्टीरियोफेज वहां पाए जाते हैं जहां बैक्टीरिया पनपते हैं: सीवरों में, पाइपों से निकलने वाले अपशिष्ट पदार्थों को पकड़ने वाली नदियों में, और स्वस्थ्य रोगियों के मल में''। कई लोगों ने फ़ेज़ थेरेपी को तुरंत रोगजनक जीवाणु संक्रमण के उन्मूलन के लिए एक महत्वपूर्ण तरीका माना। एक जॉर्जियाई, जॉर्ज एलियावा, इसी तरह की खोज कर रहा था। उन्होंने पेरिस में पाश्चर इंस्टीट्यूट की यात्रा की, जहां उनकी मुलाकात डी हेरेल से हुई और 1923 में, उन्होंने जॉर्जिया के त्बिलिसी में जॉर्ज एलियावा इंस्टीट्यूट की स्थापना की, जो फेज थेरेपी के विकास के लिए समर्पित था। फेज थेरेपी का उपयोग रूस में किया जाता है, जॉर्जिया और पोलैंड और सोवियत सेना में कुछ समय के लिए रोगनिरोधी रूप से इस्तेमाल किया गया था। प्राकृतिक चिकित्सा की जड़ें 19वीं शताब्दी में यूरोप में चले 'प्राकृतिक चिकित्सा आन्दोलनों' में निहित हैं। स्कॉटलैण्ड के थॉमस एलिन्सन 1880 के दशक में 'हाइजेनिक मेडिसिन' का प्रचार कर रहे थे। वे प्राकृतिक आहार, व्यायाम पर जोर देते थे तथा तम्बाकू का सेवन न करने एवं अतिकार्य से बचने की सलाह देते थे। 'नेचुरोपैथी' शब्द का पहला प्रयोग 1895 में जॉन स्कील ने किया था। उसी शब्द को बेनेडिक्ट लस्ट ने आगे बढ़ा दिया था जिस कारण अमेरिका के प्राकृतिक चिकित्सक बेनेडिक्ट को यूएस में नेचुरोपैथी का जनक मानते है (Brown, 1988)।

फेज थेरेपी/नेचुरोपैथी के मुख्य सिद्धान्त निम्नलिखित हैं

1– सभी रोग, उनके कारण एवं उनकी चिकित्सा एक है। चोट–चपेट और वातावरणजन्य परिस्थितियों को छोड़कर सभी रागों का मूलकारण एक ही है और इनका इलाज भी एक है। शरीर में विजातीय पदार्थो के संग्रह से रोग उत्पन्न होते है और शरीर से उनका निष्कासन ही चिकित्सा है।

2– रोग का मुख्य कारण जीवाणु नही है। जीवाणु शरीर में जीवनी शक्ति के ह्रास आदि के कारण विजातीय पदार्थो के जमाव के पशचात् तब आक्रमण कर पाते है जब शरीर में उनके रहने और पनपने लायक अनुकूल वातावरण तैयार हो जाता है। अतः मूल कारण विजातीय पदार्थ है, जीवाणु नहीं। जीवाणु द्वितीय कारण है।

3– तीव्र रोग चूंकि शरीर के स्व–उपचारात्मक प्रयास है अतः ये हमारे शत्रु नही मित्र है। जीर्ण रोग तीव्र रागों के गलत उपचार और दमन कें फलस्वरूप पैदा होते है।

4– प्रकृति स्वयं सबसे बडी चिकित्सक है। शरीर में स्वयं को रोगों से बचाने व अस्वस्थ हो जाने पर पुनः स्वास्थ्य प्राप्त करने की क्षमता विद्यमान है।

5– प्राकृतिक चिकित्सा में चिकित्सा रोग की नहीं बल्कि रोगी की होती है।

6– प्राकृतिक चिकित्सा में रोग निदान सरलता से संभव है। किसी आडम्बर की आवश्यकता नहीं पड़ती। उपचार से पूर्व रोगों के निदान के लिए लम्बा इन्तजार भी नहीं करना पड़ता।

7– जीर्ण रोग से ग्रस्त रोगियों का भी प्राकृतिक चिकित्सा में सफलतापूर्वक तथा अपेक्षाकृत कम अवधि में इलाज होता है।

8– प्राकृतिक चिकित्सा से दबे रोग भी उभर कर ठीक हो जाते है।

9– प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा शारिरिक, मानसिक, सामाजिक (नैतिक) एवं आध्यात्मिक चारों पक्षों की चिकित्सा एक साथ की जाती है।

10– विशिष्ट अवस्थाओं का इलाज करने के स्थान पर प्राकृतिक चिकित्सा पूरे शरीर की चिकित्सा एक साथ करती है।

11– प्राकृतिक चिकित्सा में औषधियों का प्रयोग नहीं होता।

व्यवहार में नेचुरोपैथी

नेचुरोपैथी या प्राकृतिक चिकित्सा न केवल उपचार की पद्धति है, अपितु यह एक जीवन पद्धति है। इसे बहुधा 'औषधिविहीन उपचार पद्धति' कहा जाता है। यह मुख्य रूप से प्रकृति के सामान्य नियमों के पालन पर आधारित है। जहाँ तक मौलिक सिद्धांतो का प्रश्ना है, इस पद्धति का आयुर्वेद से निकटतम सम्बन्ध है। प्राकृतिक चिकित्सा के समर्थक खान–पान एवं रहन–सहन की आदतों, शुद्धि कर्म, जल चिकित्सा, ठण्डी पट्टी, मिटटी की पट्टी, विविध प्रकार के स्नान, मालिश तथा अनेक नई प्रकार की चिकित्सा विधाओं पर विशेष बल देते है (Jagtenberg *et al.*, 2006)। प्राकृतिक चिकित्सक पोषण चिकित्सा, भौतिक चिकित्सा, वानस्पतिक चिकित्सा, आयुर्वेद आदि पौर्वात्य चिकित्सा, होमियोपैथी, छोटी–मोटी शल्यक्रिया, मनोचिकित्सा आदि को प्राथमिकता देते हैं। प्राकृतिक चिकित्सा के व्यवहार में आने वाले कुछ कर्म नीचे वर्णित हैं–

मिट्टी चिकित्सा

प्राकृतिक चिकित्सा में माटी का प्रयोग कई रोगें के निवारण में प्राचीन काल से ही होता आया है। नई वैज्ञानिक शोध में यह प्रमाणित हो चुका है कि माटी चिकित्सा की शरीर को तरो ताजा करने जीवंत और उर्जावान बनाने में महती उपयोगिता है। चर्म विकृति और घावों को ठीक करने में मिट्टी चिकित्सा अपना महत्व साबित कर चुकी है। माना जाता रहा है कि शरीर माटी का पुतला है और माटी के प्रयोग से ही शरीर की बीमारियां दूर की जा सकती हैं। शरीर को शीतलता प्रदान करने के लिए मिट्टी–चिकित्सा का उपयोग किया जाता है। मिट्टी, शरीर के दूषित पदार्थों को घोलकर व अवशोषित कर अंततः शरीर के बाहर निकाल देती है। मिट्टी की पट्टी एवं मिट्टी–स्नान इसके मुख्य उपचार हैं। मृदास्नान (मड बाथ) रोगों से मुक्ति का अच्छा उपाय है (Baer and Hans, 2001)।

मिट्टी के लाभ

विभिन्न रोगों जैसे कब्ज, स्नायु–दुर्बलता, तनावजन्य सिरदर्द, उच्च रक्तचाप, मोटापा तथा विशेष रूप से सभी प्रकार के चर्म रोगों आदि में सफलतापूर्वक इसका उपयोग कर जीवन शक्ति का संचार एवं शरीर को कांतिमय बनाया जा सकता है। रोग चाहे शरीर के भीतर हो या बाहर, मिट्टी उसके विष और गर्मी को धीरे–धीरे चूसकर उस जड़–मूल से नष्ट करके ही दम लेगी। यह मिट्टी की खासियत है।

मिट्टी कैसी हो?

मिट्टी–स्नान के लिए जिस क्षेत्र में जैसी मिट्टी उपलब्ध हो, वही उपयुक्त है लेकिन प्रयोग में लाई जाने वाली मिट्टी साफ–सुथरी, कंकर–पत्थर व रासायनिक खादरहित तथा जमीन से 2–3 फुट नीचे की होना चाहिए। एक बार उपयोग में लाई गई मिट्टी को दुबारा उपयोग में न लें। अगर मिट्टी बहुत ज्यादा चिपकने वाली हो तो उसमें थोड़ी–सी बालू रेत मिला लें। संक्रमण से ग्रस्त तथा अत्यधिक कमजोर व्यक्ति मिट्टी–स्नान न करें। ठंडे पानी से स्नान करने के पश्चात शरीर पर हल्का तेल मल लें।

सूखी मिट्टी स्नान

शुद्ध–साफ मिट्टी को कपड़े से छान लीजिए और उससे अंग–प्रत्यंग को रगडिए। जब पूरा शरीर मिट्टी से रगड़ा जा चुका हो, तब 15–20 मिनट तक धूप में बैठ जाएं, तत्पश्चात ठंडे पानी से, नेपकीन से घर्षण करते हुए स्नान कर लीजिए।

गीली मिट्टी स्नान

शुद्ध, साफ कपड़े से छनी हुई मिट्टी को रातभर पानी से गलाकर लेई (पेस्ट) जैसा बना लीजिए और पूरे शरीर पर लगाकर रगड़िए तथा धूप में 20–30 मिनट के लिए बैठ जाएं। जब मिट्टी पूरी तरह से सूख जाए तब ठंडे पानी से पूरे शरीर का नेपकीन से घर्षण करते हुए स्नान कर लें।

मिट्टी की पट्टी का प्रयोग

उदर विकार, विबंध, मधुमेह, सिर दर्द, उच्च रक्त चाप ज्वर, चर्मविकार आदि रोगों में किया जाता है। पीड़ित अंगों के अनुसार अलग अलग मिट्टी की पट्टी बनायी जाती है।

वस्ति (एनिमा)

वस्ति (enima) वह क्रिया है, जिसमें गुदामार्ग, मूत्रमार्ग, अपत्यमार्ग, व्रण मुख आदि से औषधि युक्त विभिन्न द्रव पदार्थों को शरीर में प्रवेश कराया जाता है। उपचार के पूर्व इसका प्रयोग किया जाता जिससे कोष्ट शुद्धि हो। रोगानुसार शुद्ध जल, नीबू जल, तक्त, निम्ब क्वाथ का प्रयोग किया जाता है

जल चिकित्सा

मनुष्य–शरीर तीन चौथाई भाग से अधिक जल से ही बना है। हमारे रक्त, माँस, मज्जा में जो आद्रता या नमी का अंश है वह पानी के कारण ही है। मल, मूत्र, पसीना और तरह–तरह के रस, सब पानी के ही रूपान्तर होते हैं। यदि शरीर में पानी की कमी

हो जाती है तो तरह–तरह के रोग उठ खड़े होते हैं पानी की कमी से ही गर्मी में अनेक लोग लू लगकर मर जाते हैं। जुकाम में पानी की भाप लेने से बहुत लाभ होता है। इसी प्रकार सिर दर्द और गठिया के दर्द में भी इस उपचार से निरोगता प्राप्त होती है, शरीर में जब फोड़े फुँसी अधिक निकलने लगते हैं और मल्हम आदि से कोई लाभ नहीं होता तो जलोपचार उनको चमत्कारी ढंग से ठीक कर देता है। पेट–दर्द होने पर प्राकृतिक चिकित्सक ही नहीं एलोपैथिक डाक्टर भी रबड़ की थैली या बोतल में गर्म पानी भर कर सेक करवाते हैं। कब्ज के रोग में गर्म पानी पीना बड़ा लाभकारी होता है और जो नित्य प्रति सुबह गर्म पानी नियम से पीते रहते हैं उनका कब्ज धीरे–धीरे अवश्य ठीक हो जाता है। रोगों और शारीरिक पीड़ा के निवारण के लिये गर्म पानी का प्रयोग तो साधारण गृहस्थों के यहाँ भी सदा से होता आया है, पर ठंडे पानी के लाभों को थोड़े ही लोग समझते हैं, यद्यपि ठंडा पानी गर्म पानी की अपेक्षा अधिक रोग निवारक सिद्ध हुआ है। ज्वर, चर्म, रोग में ठंडे पानी से भीगी हुई चादर को पूरी तरह लपेटे रहने से आश्चर्यजनक लाभ पहुँचता है। उन्माद तथा सन्निपात के रोगियों के सिर पर खूब ठण्डे जल में भीगा हुआ कपड़ा लपेट देने से शान्ति मिलती है (Thielking, 2016)। शरीर के किसी भी भाग में चोट लगकर खून बह रहा हो बर्फ के जल में भीगा हुआ कपड़ा लगाने से खून बहना रुक जाता है। नाक से खून का बहना भी पानी से सिर को धोने तथा मिट्टी के सूँघने, लपेटने से ठीक होता है। इसी प्रकार अन्य अंगों के विकार भी जल के प्रयोग से सहज में दूर हो जाते हैं। जर्मनी के डाक्टर लुई कूने ने अपने ग्रंथ में बहुत स्पष्ट रूप से यह समझा दिया है कि जल–चिकित्सा ही सर्वोत्तम है। उसमें किसी प्रकार का खर्च नहीं है और सादा जल का प्रयोग करने से शरीर में कोई नया विकार भी उत्पन्न होना संभव नहीं है।

स्नान की वैज्ञानिक विधि

स्नान के लिये बहता हुआ साफ पानी सबसे अच्छा होता है। वह न मिल सके तो कुँआ, तालाब आदि का ताजा पानी भी काम दे सकता है। बहते हुये और ताजा पानी में जो प्राण तत्व पाया जाता है वह बर्तनों में कई घंटों तक रखे पानी में नहीं रहता। इसलिये अगर रखे हुये पानी से ही काम लेना पड़े तो उसे एक बर्तन से दूसरे बर्तन में बार–बार कुछ ऊँचाई से डालने से उसमें प्राण–शक्ति का संचार हो जाता है। स्नान का पानी सदैव ठण्डा ही होना चाहिये, हाँ उसका तापक्रम ऋतु के अनुसार इतना रखा जा सकता है जिसे अपना शरीर सहज में सहन कर सके। अपनी शक्ति से अधिक ठण्डे पानी, से स्नान करना जिससे मन प्रसन्न होने के बजाय संकुचित हो, लाभदायक नहीं होता। इसी प्रकार गर्म पानी से स्नान करना भी हानिकारक है, सिवाय किसी विशेष बीमारी की अवस्था के जिसमें इस प्रकार के स्नान का विधान हो। पानी अधिक ठण्डा जान पड़े तो उसे धूप में रख कर या गर्म पानी मिला कर सहने योग्य बनाया जा सकता है। बहुत ठण्डे पानी में अधिक देर तक स्नान करने से रक्त –संचारण क्रिया में बाधा पड़ती है। स्नान करते समय शरीर को खूब मलना आवश्यक है जिससे मैल छूट कर देह के भीतर की गर्मी को उत्तेजना मिले और रक्त–संचरण ठीक ढंग से होने लगे। इसके लिये शरीर को किसी मोटे और खुरदरे तौलिये से रगड़ना ठीक रहता है। इससे शरीर के रोम कूप भली प्रकार खुल जाते हैं और भीतर का मैल पसीने के रूप में आसानी से निकल सकता है। पीठ, रीढ़ की हड्डी, लिंगेन्द्रिय, आदि की सफाई करने का बहुत से लोग ध्यान नहीं रखते। पर इन स्थानों की सफाई की और भी अधिक आवश्यकता होती है। इसलिये आधुनिक सिद्धान्तानुसार एकान्त कमरे में नंगे होकर स्नान करने को अधिक लाभदायक बतलाया गया है। कुछ भी हो स्नान में जल्दबाजी न करके समस्त अंगों को भली प्रकार रगड़ना और साफ करना आवश्यक है।

स्नान के लाभ

गर्म जल से स्नान भी अगर विधिपूर्वक किया जाय तो विशेष लाभदायक हो सकता है। गर्म जल से शरीर के रोमकूप विकसित होकर फैलते हैं, उनसे मलयुक्त पसीना सहज में निकलने लगता है और भीतर का रक्त ऊपर की तरफ दौड़ने लगता है। इससे शरीर की गर्मी बाहर निकलने लगती है और यही कारण है कि गर्म पानी से स्नान करने के थोड़ी देर बाद अधिक ठण्ड का अनुभव होने लगता है। इसलिये गर्म जल से स्नान करने के बाद तुरन्त ही ठण्डे जल से स्नान करना अनिवार्य है, ताकि ऊपर को दौड़ने वाला रक्त फिर भीतर वापस चला जाय और उसकी गर्मी अधिक मात्रा में बाहर न निकल जाय। इसके लिये फुहारा स्नान (शावर बाथ) सबसे अच्छा रहता है। यदि शावर की व्यवस्थान हो तो उसकी तरह जल छिड़क कर और छींटे मार कर स्नान किया जा सकता है। उचित रीति से स्नान करने से शारीरिक स्वास्थ्य की वृद्धि होती है और रोगों के आक्रमण का भय बहुत कम हो जाता है। अनेक साधारण रोग तो नियमित स्नान करने से अपने आप मिट जाते हैं। फुहारे के नीचे बैठ कर स्नान करना अधिक सुविधाजनक और शीतल करने वाला होता है। नदी या तालाब में तैर कर स्नान करने से व्यायाम का भी लाभ मिल जाता है और शारीरिक अंग प्रत्यंगों का विकास होता है। वर्षा में मेह के जल से स्नान करने से फुहारा स्नान का.सा आनन्द मिलता है और जल में जो अत्यधिक प्राण–शक्ति होती है उससे बहुत लाभ भी उठाया जा सकता है। पर ऐसा स्नान अपने स्वास्थ्य और शक्ति के अनुसार थोड़े समय तक ही करना चाहिये। कमजोर या अधिक वृद्ध लोगों के लिये

मेह में अधिक देर तक भीगना ठीक नहीं होता। बीमारों के लिये नित्य स्नान करना आवश्यक है, पर वह बहुत सम्भल कर होना चाहिये। पानी का तापमान ऐसा हो जिससे शरीर पर किसी तरह का खराब असर न पड़े। यदि स्नान की सुविधा न हो तो कपड़े या तौलिया को मामूली पानी में भिगोकर उससे समस्त शरीर को भली प्रकार रगड़ कर पोंछ देना भी काफी लाभदायक होता है। इससे शरीर की गन्दगी दूर हो जाती है और तबियत में ताजगी तथा प्रसन्नता का भाव आ जाता है (Langley and Stephen, 2012)।

स्नान का एक खास उद्देश्य शरीर को ठण्डा करना भी होता है क्योंकि शरीर के अन्दर जो विजातीय द्रव्य एकत्रित हो जाता है वह गर्मी उत्पन्न करता है। यह विजातीय द्रव्य अधिकाँश में नीचे के भाग में ही एकत्रित होता है इसलिए वैज्ञानिक विधि के अनुसार पहले नीचे के भागों को ही धोना और ठण्डा करना चाहिये। इसके लिए किसी ऐसी टब या नाँद में बैठाकर स्नान किया जाय जिसमें तीन चार इंच पानी भरा हो। इसमें बैठकर पेडू पर खूब छपके मारें और उसे हथेली से रगड़ कर जल को सुखाएं। इसके बाद लोटा–लोटा पानी ऊपर डालकर स्नान करें। यदि नदी तालाब आदि पर स्नान करना हो तो वहाँ डुबकी लेकर स्नान करें। स्नान के पश्चात् बदन को तौलिये से पोंछने के बजाय हथेलियों से पोंछकर ही सुखा दें तो ज्यादा लाभदायक होता है और आनन्द भी मिलता है।

इस तरह के प्राकृतिक स्नान से अनेक प्रकार के शारीरिक लाभ प्राप्त होते हैं और रोगों का भय जाता रहता है। स्त्रियों के लिये ऐसा स्नान उनकी अनेक जननेन्द्रिय सम्बन्धी बीमारियों को दूर करने वाला सिद्ध हुआ है। पुरुषों के भी प्रमेह, स्वप्नदोष, कब्ज, अजीर्ण जैसे रोगों में इसमें धीर–धीरे बड़ी कमी हो जाती है। इस प्रकार प्राकृतिक स्नान प्रत्येक व्यक्ति के लिए हितकारी है। यों तो इसके सम्बन्ध में बहुत कुछ कहा जा सकता है, पर सबका साराँश यही है हमारे शरीर में जमा होने वाला विजातीय द्रव्य नीचे के भाग में ज्यादा असर करता है। उसकी हानिकारक गर्मी को शान्त करने के लिए इस प्रकार का स्नान बड़ा लाभकारी सिद्ध होता है। इस चिकित्सा प्रणाली के आचार्य एडाल्फ जुस्ट ने बतलाया है कि जंगली पशुओं के स्वस्थ रहने का एक कारण यह भी है कि वे अपने पेडू और जननेन्द्रिय वाले हिस्से को कीचड़ और पानी में रखकर ठण्डा कर लेते हैं (Thielking, 2016)।

रोग–निवारण के लिए विशेष स्नान

इस सामान्य स्नान के अतिरिक्त बीमारों और कमजोर स्वास्थ्य वाले व्यक्तियों के लिए प्राकृतिक चिकित्सा के कई अन्य स्नान भी बड़े महत्वपूर्ण हैं, जिनसे शीघ्र प्रभाव पड़ता है और बडे–बड़े रोग थोड़े ही समय में ठीक हो जाते हैं। उनका संक्षिप्त परिचय यहाँ दिया जाता है।

कटि स्नान

इस स्नान के लिये एक विशेष बनावट की टब बाजार में बिकती है जिसका पिछला भाग कुर्सी की तरह सहारा लेने के लिये उठा रहता है। इसमें रोगी को बिल्कुल नंगा होकर बैठना पड़ता है। दोनों पैर बाहर निकले रहते हैं और सूखे रहते हैं। टब में इतना पानी भरा जाता है कि नाभि के जरा नीचे तक आ जाय। इस प्रकार बैठकर पेडू, जाँघ और जननेन्द्रिय के आस–पास के स्थानों को हथेली से या कपड़े से मलना चाहिये। आरम्भ में पाँच से दस मिनट तक स्नान करना काफी होता है बाद में इस समय को आधा घंटे तक बढ़ाया जा सकता है। पानी इतना ठंडा होना चाहि, जितना आसानी से सहन कर लिया जाय। यदि रोगी कमजोर हो और मौसम ठण्ड का हो तो उसे ऊपर से कम्बल आदि से ढक सकते हैं।

मेहन स्नान या सिजबाथ

इसमें केवल पुरुष जननेन्द्रिय के सबसे आगे के चर्म को ही धोया जाता है। टब के किनारे एक लकड़ी की चौकी पर बैठ जाएँ और इतना पानी भर लें कि वह जननेन्द्रिय के पास तक पहुँच जाए। फिर किसी नर्म कपड़े को पानी में बार–बार भिगोकर चमड़े के अग्रभाग को सामने की तरफ खींच कर धोएं और इस बात का ध्यान रखें कि भीतर के मूत्र निकलने के मार्ग को बिल्कुल न रगड़ा जाए। स्त्रियाँ भी अपनी जननेन्द्रियों के बाहरी हिस्से को इसी प्रकार धो सकती हैं।

मेरु दण्ड स्नान

इसके लिये नल के नीचे बैठकर रीढ़ की हड्डी के ऊपर पानी की धार गिराना चाहिए। अथवा तौलिया को पानी में भिगो कर उससे रीढ़ की हड्डी को रगड़ना चाहिए। इन स्नानों के बाद भीगे शरीर को अच्छी तरह पोंछकर देह में गर्मी लाने के लिये थोड़े समय तक टहलना चाहिए, या हल्का व्यायाम करना चाहिए अथवा ऋतु के अनुकूल हो तो थोड़ी देर तक धूप में रहना चाहिये। स्नान के दो घण्टे पहले और एक घण्टे बाद तक खाना मना है।

गीली चादर लपेटना

ज्वर की अवस्था में अथवा समस्त शरीर में विजातीय द्रव्य के अधिकता होने पर गीली चादर का प्रयोग बहुत लाभदायक होता है। पहले एक कम्बल को नीचे बिछाकर उस पर एक भीगा और निचोड़ा हुआ साफ चादर फैला दिया जाता है। उस पर रोगी को लिटाकर उसे पूरी तरह उसमें लपेट दिया जाता है, जिससे किसी तरफ होकर बाहरी हवा का आवागमन न हो सके। गर्दन

से ऊपर सिर को खुला रखा जाता है। उसके पश्चात् कम्बल को भी ऊपर से उसी प्रकार लपेट दिया जाता है। इस प्रकार पन्द्रह बीस मिनट तक पड़े रहने से पसीना आ जाता है और देह की अतिरिक्त गर्मी निकलकर स्वस्थता का अनुभव होने लगता है।

गीले कपड़े की पट्टी

जब पूरे शरीर के बजाय किसी खास अंग की ही चिकित्सा करने की आवश्यकता होती है तो कपड़े के एक टुकड़े की कई तह करके ठण्डे पानी से भिगोकर उस स्थान पर रख दिया जाता है। जब पट्टी गरम हो जाय तो उसको हटाकर फिर से ठ.डा करके रखा जा सकता है।

ठण्डे पानी की प्रतिक्रिया

इन सब विधियों से जो लाभ होता है उसका मूल कारण ठण्डे पानी की प्रतिक्रिया ही होती है। जिस प्रकार नंगे बदन पर ठंडे पानी के छींटे मारने से फुरफुरी सी आती है और रोंये खड़े हो जाते हैं और उसी के फल से बाद में रक्त संचार की गति तेज हो जाती है। इसी प्रकार उक्त स्नानों और पट्टियों के प्रयोग में जहाँ शीतल पानी का स्पर्श होता है वहाँ पहले तो गर्मी की कमी हो जाती है, पर बाद में उस कमी की पूर्ति के लिए भीतर का रक्त वहाँ खिंच आता है। इस प्रकार जब रक्त की गति तेज होती है तो उसके साथ दूषित विजातीय द्रव्य भी बहकर मलाशय की तरफ ढकेले जाते हैं। इस प्रकार जल के प्रभाव से रागों का निवारण होता है और सुस्त तथा निर्बल अंगों को नवीन चेतना प्राप्त होती है। अधिकाँश रागों की जड़ पेट सम्बन्धी खराबी अथवा कब्ज ही होती है। उसका दूषित विकार नीचे के हिस्से में ही रहता है। कटिस्नान द्वारा इसी भाग को चौतन्य किया जाता है। इससे पुराने और सड़े मल के निकलने में सहायता मिलती है। कठिन अवस्था में कटिस्नान और एनीमा दोनों का एक साथ प्रयोग किया जाता है जिससे शरीर की शुद्धि शीघ्रतापूर्वक होती है। पुरुष और स्त्रियों के प्रजनन अगों का अग्रभाग समस्त स्नायविक नाड़ी–जालवा केन्द्र माना गया है। उसे शीतलता पहुँचाकर वहाँ की हानिकारक गर्मी को निकाल देने से समस्त शरीर को नव–जीवन और स्फूर्ति की प्राप्ति होती है। रीढ़ के बीच होकर ही ज्ञान तंतुओं का मुख्य संस्थान है, इसलिए रीढ़ को जलधारा द्वारा अथवा कपड़े की पट्टी द्वारा ठण्डक पहुँचाने से मस्तिष्क की निर्बलता दूर होती है। गीली चादर लपेटने का असर समस्त देह पर पड़ता है और ज्वर, चेचक, रक्त, जिगर, दमा, क्षय, शोथ, खुजली जैसे शरीरव्यापी रोगों पर उसका बहुत हितकारी प्रभाव पड़ता है।

भाप–स्नान

जिस प्रकार ठण्डे और गर्म पानी के प्रयोग से अनेक रोग दूर होते हैं उसी प्रकार भाप के प्रयोग से भी अनेक प्रकार की शारीरिक पीड़ाओं से छुटकारा मिलता है। अगर समस्त शरीर का कोई रोग हो तो उसके लिए किसी लोहे की जाली के पलंग या छिरछिरी बुनी हुई चारपाई पर रोगी को लिटाकर उसके नीचे खौलते हुए पानी के तीन बर्तन रख देने चाहिये और सबके ऊपर से एक बड़ा कम्बल इस प्रकार डाल देना चाहिये कि वह पूर्ण चारपाई को ढ़ककर जमीन को छूता रहे जिससे भाप बाहर न निकल सके। ऐसा करने से थोड़ी देर में खूब पसीना निकलने लगता है जिसके साथ शरीर के बहुत से विकार भी निकल जाते हैं और शरीरव्यापी समस्त दोषों की शुद्धि हो जाती है। अगर किसी खास अंग पर ही भाप देनी हो तो उसी अंग को भाप निकलते हए बर्तन के ऊपर रखना चाहिये और ऊपर से किसी कपड़े से इस प्रकार ढक देना चाहिये कि वह अंग तथा बर्तन दोनों उससे ढक जाएँ। यदि ऐसा न हो सके तो खूब गरम पानी में ऊनी कपड़े के दो टुकड़े डाल देने चाहिएं। जिस अंग पर सेंक करना हो उस पर एक मोटा सूती कपड़ा डाल लेना चाहिऐ। तब पहले एक ऊनी कपड़े को निकाल कर निचोड़ कर दर्द के स्थान पर रख दें। जब वह ठण्डा होने लगे तो उसे हटाकर दूसरे टुकड़े को उसी प्रकार रख दे। सूती कपड़ा डालने का उद्देश्य यह होता है कि सेंक होते समय उस अंग को ठण्डी हवा का झोंका न लगे और दूसरे यदि ऊनी कपड़ा ज्यादा गर्म हो जाए तो उसका असर एकदम त्वचा पर न पड़े। इन विधियों से या जैसी परिस्थिति हो उसके अनुकूल इनमें कुछ परिवर्तन करके पीड़ित अगों को भाप से सेंकने से बहुत शीघ्र लाभ होता है। गर्म स्नान या भाप के उपचार के बाद ठण्डे पानी से नहाने या धोने का भी नियम है जिससे रक्त संचरण की गति ठीक हो जाए।

सूर्य रश्मि चिकित्सा

सूर्य के प्रकाश के सात रंगो के द्वारा चिकित्सा की जाती है। यह चिकित्सा शरीर में उष्णखता बढ़ाता है। स्ना युओं को उत्ते जित करना वात रोग, कफ, ज्वर, श्वासस, कास, आमवात पक्षाघात, ह्रदयरोग, उदरमूल, मेढोरोग, वात जन्यचरोग, शोध चर्मविकार, पित्ततजन्य रोगों में प्रभावी हैं।

उपवास

सभी पेट के रोग, श्वास, आमवात, सन्धिवात, त्वक विकार, मेदो वृद्धि आदि में विशेष उपयोग होता है।

निष्कर्ष

प्राचीन काल से ही फेज़ थेरेपी हर तरह की बीमारियों में कारगर साबित हो रही है। हमें प्राकृतिक तरीकों का अधिक से अधिक उपयोग करना चाहि, ताकि दुनिया में चिकित्सा उपचार पर होने

वाले खर्च को कम किया जा सके और गरीबों तक आसानी से इलाज पहुंचाया जा सके। पारंपरिक ज्ञान को सूचीबद्ध कर उसका वर्तमान में उपयोग कर विश्व में चिकित्सा के क्षेत्र में क्रांति लायी जा सकती है। फेज़ थेरेपी को सभी शिक्षण संस्थानों के पाठ्यक्रम में शामिल किया जाना चाहिए ताकि सभी को बचपन से ही इसके बारे में पता चल सके और समय पर इसका अधिक लाभ प्राप्त किया जा सके।

REFERENCES

Baer, Hans, A. (2001). The Sociopolitical Status of U.S. Naturopathy at the Dawn of the 21st and Century. Medical Anthropology Quarterly. 15(3): 329-346.

Brown, P.S. (1988). Nineteenth and century American health reformers and the early nature cure movement in Britain. Medical History. 32(2): 174-194.

How it all Began Archived (2010). At the Wayback Machine. Allinson Flour website. Silver Spoon British Sugar Associated British Foods.

Jagtenberg, Tom, Evans, Sue Airdre, Howden, Ian (2006). Evidence and based medicine and naturopathy. Journal of Alternative and Complementary Medicine. 12(3): 323-328.

Langley, Stephen (2012). History of Naturopathy. College of Naturopathic Medicine Website. UK Archived from the Original on August. 29(2): 100-106.

Report 12 of the Council on Scientific Affairs (2013). At the Wayback Machine- American Medical Association-1997. Lay summary– 1997 Annual Meeting of the American Medical Association:Summaries and Recommendations of the Council on Scientific Affairs (1997).

Thielking, M. (2016). Essentially Witchcraft: A Former Naturopath Takes on the Field".